बृहती ब्रह्ममेधा

(उच्चस्तरीय त्रैमासिक योग प्रशिणक्ष में प्रदत्त प्रवचन)

प्रथम भाग

प्रवचन कर्ता

पूज्य स्वामी सत्यपति जी परिव्राजक

संकलयिता एवं सम्पादक

सुमेरु प्रसाद दर्शनाचार्य

प्रकाशक

दर्शन योग महाविद्यालय

आर्यवन, रोजड़, पत्रा. सागपुर, ता. तलोद, जि. साबरकांठा (गुजरात) ३८३३०७

दूरभाष : (०२७७०) २८७४१८, २८७५१८ • चलभाष : ९४०९४ १५०११, ९४०९४ १५०१७

Email : darshanyog@gmail.com • **Website :** www.darshanyog.org

Facebook : darshanyog • **Youtube :** darshanyog2009

Orkut : darshanyog • **Skype :** darshanyog

बृहती ब्रह्ममेधा

प्रथम भाग

प्रकाशन तिथि : — ज्येष्ठ सुदी दशमी, विक्रम संवत् - २०६९,

दिनांक : ३१ मई २०१२, गुरुवार

सृष्टि संवत् -१,९६,०८,५३,११३

संस्करण : प्रथम

पृष्ठ संख्या : १२ + ५६८ = ५८०

(तीनों भागों की कुल पृष्ठ संख्या : ५८० + ६५६ + ६६४ = १९००)

प्राप्तिस्थान

वानप्रस्थ साधक आश्रम : आर्यवन, रोजड़, पत्रा. सागपुर, जि. साबरकांठा (गुजरात) ३८३३०७

आर्यसमाज मंदिर : महर्षि दयानन्द मार्ग, रायपुर दरवाजा बाहर, अहमदाबाद. (गुजरात)

विजयकुमार गोविन्दराम हासानन्द : ४४०८, नई सड़क, दिल्ली-६

आर्य प्रकाशन : ८१४, कुण्डेवालान, अजमेरी गेट, दिल्ली-६

ऋषि उद्यान : आना सागर, पुष्कर रोड, अजमेर (राजस्थान)

आर्य प्रतिनिधि सभा : १५, हनुमान रोड, दिल्ली

श्रुति न्यास : सी-७३, सै.-१५, राउरकेला (उडीसा)

गुरुकुल आश्रम आमसेना : खरियार रोड, जि. नवापारा, उडीसा-७६६१०९

आर्य गुरुकुल महाविद्यालय : खर्राघाट, नर्मदापुरम्, होशंगाबाद (म.प्र.) ४६१००१

सर्वोदय साहित्य मंदिर : रेलवे प्लेटफार्म नं. १, अहमदाबाद. (गुजरात)

श्री चंद्रेश आर्य : ३१०, वार्ड नं. ११ बी, साधु वासवाणी सोसा., गोपालपुरी, गाँधीधाम, कच्छ (गुज.)

वैदिक संस्थान : एफ एफ-५, आदर्श कॉम्पलेक्स, मुरलीधर सो. सामने, ओढव, अहमदाबाद-१५

विजय वस्त्र भंडार : निलंगा, ४१३५२१ (महाराष्ट्र)

आर्य समाज मन्दिर : पोरबंदर, राजकोट, भरुच, मोरबी, टंकारा, जूनागढ़, गांधीनगर, आणंद, जामनगर आदि

मूल्य : **८००/— रुपये** (तीनों भाग)

ग्राफिक्स/लेसर टाईप सेटिंग : विनायक ग्राफिक्स डिझाइन, अहमदाबाद, फोन : ९२२७२००२३२

मुद्रक : प्रिन्टकॉन, नारोल, अहमदाबाद, फोन : ०७९-३२९८३११८

॥ ओ३म् ॥

वानप्रस्थ साधक आश्रम

Vaanprasth Saadhak Aashram

(साधना, स्वाध्याय, सेवा तथा वैदिक विद्वान, वानप्रस्थियों एवं संन्यासियों के निर्माण हेतु भव्य परियोजना)

आर्य वन, रोजड़, पत्रा. : सागपुर, जि. साबरकांठा-३८३ ३०७, गुजरात, भारत

Aaryavan, Rojad, Po. : Sagapur, Dist. : Sabarkantha-383 307, Gujarat, India

योगादेव तु कैवल्यम्

ट्रस्ट रजिस्ट्रेशन क्रमांक ई-२७३२/सा.कां.

आशीर्वचन

मैंने ऊँची योग्यता वाले दर्शनों के विद्वान्, व्याकरण के विद्वान् और योगविद्या में रुचि, श्रद्धा रखने वाले योग-जिज्ञासु सज्जनों के लिए लगभग तीन मास आषाढ़ शुक्ला द्वादशी वैक्रमाब्द २०६० से आश्विन शुक्ला त्रयोदशी २०६० तक तदनुसार ११ जुलाई २००३ ई. से ८ अक्टूबर २००३ पर्यन्त एक **त्रैमासिक उच्चस्तरीय क्रियात्मक योग प्रशिक्षण शिविर** का आयोजन किया था। शिविर का प्रयोजन था शिविरार्थी स्वयं विशुद्ध वैदिक-योग के विद्वान् बनें और क्रियारूप में अभ्यास करते हुए समाधि के द्वारा ईश्वर-साक्षात्कार तक पहुँचें तथा अन्यों को अपने समान बनाने का प्रयास करें।

इस शिविर में वेद, वैदिक-दर्शन, उपनिषद्, सत्यार्थप्रकाश आदि ग्रन्थों का क्रियारूप में किये अपने योग-संबंधी अनुभवों, योग से संबंधित यम-नियम आदि आठ अंगों का व्यवहार के रूप में पालन, ईश्वर-प्रणिधान, स्व-स्वामि-सम्बन्ध, विवेक-वैराग्य उनका अभ्यास, ईश्वर की उपासना, सम्प्रज्ञात और असम्प्रज्ञात समाधि के भिन्न-भिन्न स्तर, प्रलयावस्था-सम्पादन, समाधिप्राप्त योगी की अनुभूतियाँ और उनसे होने वाले लाभ, लोक में योग के नाम से प्रचलित अनेक भ्रान्तियों का स्वरूप और उनका निवारण तथा आत्मनिरीक्षण आदि अनेक विषयों का विशेषरूप से प्रशिक्षण दिया गया था।

इस शिविर में भाग लेने वाले दर्शनाचार्य श्री सुमेरु प्रसाद जी ने इस प्रशिक्षण शिविर के विषयों को महान् पुरुषार्थ से लेखबद्ध तथा यन्त्रों के माध्यम से संगृहीत करते रहे। उसी संग्रह में से छाँटकर इन्होंने प्रथम संक्षिप्त रूप में **ब्रह्ममेधा** के नाम से एक पुस्तक का आकार दिया और दर्शन योग महाविद्यालय से उसका प्रकाशन हो चुका है। अब उस सम्पूर्ण संग्रह को विस्तृत रूप में **बृहती ब्रह्ममेधा** के नाम से विशालकाय ग्रन्थ के रूप में प्रकाशित किया जा रहा है। इस पुस्तकों के प्रकाशित होने से और अध्ययन-अध्यापन से समाज-राष्ट्र और विश्व का बहुत बड़ा उपकार होगा। इसलिये मैं आशा रखता हूँ कि धार्मिक योग-जिज्ञासु-सज्जन इन पुस्तकों का श्रद्धा और रुचि से विशेष अध्ययन करेंगे जिससे योग के वास्तविक स्वरूप को जान सकें।

इसके साथ मैं श्री सुमेरु प्रसाद जी 'दर्शनाचार्य' को आशीर्वाद देता हूँ कि वे ईश्वर की कृपा से स्वस्थ हों, दीर्घायु हों और योगमार्ग पर चलते हुए शिविर के मूल उद्देश्य ईश्वर-साक्षात्कार तक पहुँचे तथा अन्यों को भी ईश्वर-साक्षात्कार करवाने का प्रयास करते रहें।

स्वामीसत्यपति

वैशाख कृष्णा ४/२०६९
८ अप्रैल २०१२

स्वामी सत्यपति परिव्राजक

TEL : +91(02770) 287417, 291496, 291555, 291717 • EMAIL : vaanaprastharojad@gmail.com • WEBSITE : www.vaanaprastharojad.org

॥ ओ३म् ॥

वानप्रस्थ साधक आश्रम

Vaanprasth Saadhak Aashram

(साधना, स्वाध्याय, सेवा तथा वैदिक विद्वान, वानप्रस्थियों एवं संन्यासियों के निर्माण हेतु भव्य परियोजना)

आर्य वन, रोजड़, पत्रा. : सागपुर, जि. साबरकांठा-३८३ ३०७, गुजरात, भारत
Aaryavan, Rojad, Po. : Sagapur, Dist. : Sabarkantha-383 307, Gujarat, India

ट्रस्ट रजिस्ट्रेशन क्रमांक ई-२७३२/सा.कां.

शुभेच्छा सन्देश

शास्त्रकारों ने मानव जीवन का मुख्य लक्ष्य समस्त दु:खों से छूटकर पूर्ण आनन्द को प्राप्त करना बताया है। दु:ख की उत्पत्ति अविद्या के कारण होती है और अविद्या का समूल नाश तत्त्वज्ञान अर्थात् विशेष आध्यात्मिक ज्ञान-विज्ञान से होता है। यह तत्त्वज्ञान समाधि अवस्था में ईश्वर के साक्षात्कार से उपलब्ध होता है। परन्तु श्रेयमार्ग के पथिक आध्यात्मिक जिज्ञासुओं के लिए समाधि की प्राप्ति व मुक्ति के परमानन्द की अनुभूति कराने वाली इस ब्रह्मविद्या का प्रथम सैद्धान्तिक रूप में परिज्ञान गुरुमुख से अवश्य करना चाहिए क्योंकि इस पराविद्या के व्यावहारिक जानकार किसी त्यागी, तपस्वी, ब्रह्मनिष्ठ, तत्ववेत्ता के मुखारविन्द से श्रवण किया हुआ ज्ञान असन्दिग्ध तथा शीघ्र फलदायी होता है।

वर्त्तमान के मनुष्य समाज में इस अलौकिक आनन्द देने वाली पराविद्या का पठन-पाठन लुप्त-सा हो गया है अथवा यह कहना चाहिए कि लोगों ने इस विद्या-प्राप्ति को अपनी जीवनचर्या में से निकाल कर फेंक दिया। परिणाम स्वरूप आज का मानव-समाज स्वछन्द होकर मात्र उद्याम भोगों को भोगने में ही सर्वथा प्रवृत्त हो गया है। आज इस पराविद्या के न तो कुशल उपदेशक सुलभ हैं और न ही योग्य श्रोता। यदि कहीं कोई उपलब्ध भी है, तो दोनों का समायोजन नहीं हो पा रहा है। उनके समक्ष स्थान, साधन, जलवायु, स्वतन्त्रता आदि से सम्बद्ध विविध बाधायें उपस्थित हो जाती हैं।

पुनरपि एक संयोग वा हमारा सौभाग्य रहा कि इस परिस्थिति में योगनिष्ठ पूज्य स्वामी सत्यपति जी परिव्राजक ने अपने इस वानप्रस्थ साधक आश्रम में अध्यात्म जिज्ञासुओं के लिए सन् 2003 में एक त्रैमासिक शिविर का आयोजन किया। उसी शिविर में आचार्य सुमेरु प्रसाद जी दर्शनाचार्य ने गुरुमुख से श्रवित विषयों को संक्षेप में लिपिबद्ध किया था और उससे 'ब्रह्ममेधा' नामक पुस्तक का सर्जन हुआ। यद्यपि इस ब्रह्ममेधा में पराविद्या से सम्बन्धित महत्त्वपूर्ण विषयों का उल्लेख हो चुका है, पुनरपि जैसा कि प्राय: अध्येताओं की जिज्ञासा होती है कि मै प्रस्तुत विषयों को और अधिक स्पष्टता तथा विस्तार से जानूँ, तो उनके लिए विस्तृत व्याख्यान की अपेक्षा हो जाती है। इसी परिप्रेक्ष्य में लम्बे काल से अनेक जिज्ञासुओं की माँग थी कि इन विषयों से सम्बन्धित विस्तृत ग्रन्थ का प्रकाशन हो। तो अब अब सम्पन्न हो गया।

आचार्य जी ने वर्षो तक, शान्त-एकान्त स्थल पर गम्भीरता पूर्वक मनन, चिन्तन, निदिध्यासन करके, परम पुरुषार्थ के साथ स्वामी जी द्वारा उपदिष्ट ब्रह्मविद्या के गूढ़ विषयों का विस्तार और अधिक सरल बनाने का प्रयास किया है, जो वस्तुत: स्तुत्य, प्रशंसनीय और प्रभावशाली है। निश्चित् ही इस 'बृहती ब्रह्ममेधा' ग्रन्थ से देवयान पथिकों का मार्ग प्रशस्त होगा, उनकी अनेक भ्रान्तियाँ दूर होंगी और वे संशयरहित होकर जीवन के परम लक्ष्य को त्वरित गति से प्राप्त करने में समर्थ हो सकेंगे, इसी आशा तथा विश्वास के साथ.....

शुभेच्छुक

दिनांक : १९/०४/२०१२

ज्ञानेश्वरार्य

ज्ञानेश्वरार्य

अधिष्ठाता, वानप्रस्थ साधक आश्रम

TEL : +91(02770) 287417, 291496, 291555, 291717 • EMAIL : vaanaprastharojad@gmail.com • WEBSITE : www.vaanaprastharojad.org

दर्शन योग महाविद्यालय

(वैदिक दर्शन अध्यापन एवं ध्यान योग प्रशिक्षण का आदर्श संस्थान)

आर्यवन, रोजड़, पत्रालय-सागपुर, जिला-साबरकांठा (गुजरात) ३८३३०७

दूरभाष : (०२७७०)२८७४१८, (०२७७४)२७७२१७

Darshan Yog Mahavidyalaya

(Unique & Ideal Educational Institution for Vedic Darshan & Meditation)

Aryavan, Rojad, Post- Sagpur, Dist- Sabarkantha, (Gujarat) PIN : 383 307

Phone : +91-2770-287418, +91-2774-277217

प्रकाशकीयम्

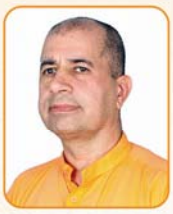

आज पूरे संसार पर भौतिकता का आधिपत्य निरन्तर बढ़ता जा रहा है। इस वातावरण का इतना अधिक प्रभाव हो रहा है कि व्यक्ति खुले रूप में नास्तिक बनकर जीने में अपना अहोभाग्य समझ रहा है। मानव जीवन के अन्तिम लक्ष्य मोक्ष को भुलाकर केवल अधिकाधिक लौकिक सुख को पा लेने में ही स्वयं को कृतकृत्य समझने लगा है। यद्यपि परिणाम विपरीत आ रहे हैं। व्यक्ति राग-द्वेष, लोभ-मोह के जाल में फंसता हुआ दिनोंदिन दु:ख को प्राप्त होता जा रहा है। अत: इससे यही सिद्ध होता है कि व्यक्ति सन्मार्ग से भटकता जा रहा है। वस्तुत: ऋषियों ने बताया

अथ त्रिविधदु:खात्यन्तनिवृत्तिरत्यन्तपुरुषार्थ:। सांख्य १/१।

आधिदैविक, आधिभौतिक और आध्यात्मिक दुखों की पूर्ण निवृत्ति तथा ईश्वर के आनन्द की प्राप्ति में ही जीवन की कृतकृत्यता है।

प्रणतिब्रह्मचर्योपसर्पणानि कृत्वा सिद्धिर्बहुकालात्। सांख्य ४/१९।

विनम्रता पूर्वक लम्बे काल तक गुरु के अनुशासन में रहते हुए योगाभ्यास के माध्यम से इसमें सफलता प्राप्त होती है।

आज से नौ वर्ष पूर्व इन्हीं उद्देश्यों को लेकर पूज्य गुरुवर स्वामी सत्यपति जी महाराज ने दर्शन योग महाविद्यालय के कुछ वरिष्ठ स्नातकों एवं अध्यात्म में रुचि रखने वाले बाहर के कुछ बड़ी आयु के ब्रह्मचारियों को तीन महीने तक योगाभ्यास का प्रशिक्षण दिया था। विद्यालय में अध्यापन तथा प्रचार कार्य में संलग्न होने के कारण मै पूर्ण रूप से उस शिविर में तो भाग नहीं ले पाया था। पुनरपि यथावसर यज्ञीयोपदेश आदि कुछ-कुछ कक्षाओं में भाग लिया था। आचार्य सुमेरु प्रसाद जी उस शिविर में नियमित रूप से पूरे काल तक भाग लेते रहे और गुरुजी के द्वारा प्रस्तुत पूरे विषयों का मनोयोग से संग्रह करते रहे।

उन्हीं विषयों को संकलित कर इन्होनें एक बृहदाकार ग्रन्थ का रूप दिया है जो बृहतीब्रह्ममेधा के नाम से प्रकाशित होने जा रहा है। प्रशिक्षण के अन्तराल में गुरु जी के द्वारा योगाभ्यास के विषय में जो विस्तार से चर्चा की गई थी उसे प्रायश: उन्हीं की भाषा और शैली में प्रस्तुत किया गया है जिससे सर्वसाधारण के लिए भी यह ग्रन्थ हृदयग्राही एवं श्रद्धास्पद रहेगा।

मै विद्यालय की ओर से इस पुस्तक के प्रकाशन हेतु अपनी सहर्ष अनुमति तथा शुभकामना प्रकट करता हूँ तथा आशा करता हूँ कि इस प्रकाशन से जहाँ गुरुजी की आध्यात्मिक निधि की सुरक्षा होगी वहाँ जन साधारण को भी विशेष लाभ होगा। विशेषकर योगाभ्यास के क्षेत्र में प्रयत्नशील अभ्यासियों को मार्गदर्शन व प्रेरणा प्राप्त होगी।

भवदीय

दिनांक : १९/०४/२०१२

स्वामी विवेकानन्द परिव्राजक

निदेशक, दर्शन योग महाविद्यालय

E mail : darshanyog@gmail.com website : www.darshanyog.org

अनुभूमिका

पुस्तक की भूमिका के रूप में प्रायः बातें 'ब्रह्ममेधा' की भूमिका में आ चुकी है। पाठक उनको वहीं देख लेंगे। कुछ विशेष आवश्यक बातें यहाँ प्रस्तुत की जा रही है।

शिविर को सम्पन्न हुए ९ वर्ष बीत गए। 'बृहती ब्रह्ममेधा' के प्रकाशन के रूप में आज हमारी एक चिराभिलषित कामना पूर्ण होने जा रही है। यद्यपि दर्शन योग महाविद्यालय में पढ़ी- सुनी बातों को संचित करने की मेरी स्वाभाविक प्रवृत्ति रही, परन्तु उसमें संचय को अपने पास तक ही सुरक्षित रखने की सोच थी। कालान्तर में अध्यात्म सरोवर के प्रकाशन से उस मनोवृत्ति में अन्तर आया। ज्ञान-विज्ञान को जितना अधिक प्रसारित किया जाए उतना ही उत्तम है, यह भाव पुनः मन में आ गया। इसी भाव को लेकर मै इस कार्य में प्रवृत्त हुआ । इस पुस्तक के प्रकाशन से यह भी लाभ दिखाई दिया कि पूज्य स्वामी सत्यपति जी महाराज की अनुभूत अध्यात्मिक निधि की बहुत अंशों में सुरक्षा हो सकेगी।

यद्यपि ब्रह्ममेधा के नाम से प्रायः सारभूत बातें प्रकाशित हो चुकी हैं परन्तु उसमें सभी बातें नहीं आ पाई थीं। जैसे कि साधक को उस काल में किस रूप में प्रशिक्षण दिया जा रहा था। बताते समय गुरु और शिष्यों के मध्य न चाहते हुए भी कैसी-कैसी स्थितियाँ उत्पन्न हो जाती हैं तथा कैसे उसका निराकरण होता है। आरम्भिक काल में शिविरार्थियों का क्या स्तर होता है और अन्त तक उनमें क्या-क्या परिवर्त्तन आ जाते हैं आदि।

विशेष रूप से जिन साधकों या श्रोताओं ने उस शिविर में भाग लिया था, शिविर के समापन तक उनको क्या-क्या उपलब्धियाँ हुईं, इसमें वे उनके ही शब्दों में अक्षरशः सुरक्षित हो गई हैं। इनको पढ़कर उनकी वे अनुभूतियाँ आज भी सक्रिय हो जाएँगी अथवा उनके आश्रय से वे साधक अपने वर्त्तमान स्तर की तुलना भी कर सकते हैं। पू. स्वामी जी के द्वारा तब जो संकेत या सावधानियाँ व्यक्त की गई थीं, उनको कितना चरितार्थ किया या नहीं, पुनः उससे क्या लाभ हुआ या क्या हानि हुई, इनका अवश्य तुलनात्मक अनुभव होगा। इसके आधार पर वे अपना अगला जीवन भी संचालित कर सकते हैं तथा अन्यों को प्रेरित कर सकते हैं, उनका मार्गदर्शन कर सकते हैं। विशेषकर वैदिक आर्ष सिद्धान्तों के आधार पर साधनारत साधकों के लिए यह संस्करण मेरी दृष्टि से अत्यन्त सहायक रहेगा। पग-पग पर उन्हें मार्गदर्शन मिलेगा। यदि कहा जाए कि यह संग्रह उन्हीं साधकों के लिए है तो कोई अतिशयोक्ति नहीं होगी।

उस त्रैमासिक शिविर में सामान्य रूप से रविवार को दो और अन्य दिनों में चार-चार कक्षाएँ होती थीं। उनका नामकरण हमने इस रूप में किया है -

प्रथम - यज्ञीयोपदेश। यह कक्षा प्रातःकाल दैनिक यज्ञ के उपरान्त होती थी। यज्ञकाल में उपदिष्ट होने से इन प्रवचनों का नाम यज्ञीयोपदेश रखा है। इसमें भिन्न-भिन्न दिनों के जो- जो विषय थे, उनका तिथि व दिनांक के साथ संकेत कर दिया है।

द्वितीय - क्रियात्मक योगाभ्यास। यह कक्षा पूर्वाह्न में होती थी। इसमें प्रायः किसी वेदमन्त्र को लेकर अर्थसहित जप और ध्यान व मनोनियन्त्रण के प्रयोगों का अभ्यास करवाया जाता था। मनोनियन्त्रण आदि का क्रियात्मक स्वरूप इसमें विशेष रूप से बताया जाता था। अतः इसका नाम क्रियात्मक योगाभ्यास रखा है। साधकों को स्वाध्याय में सुविधा हो, इस दृष्टि से इन मन्त्रोंसहित सभी कक्षाओं में प्रयुक्त मन्त्रों का संकलन परिशिष्ट के रूप में तृतीय भाग में दिया गया है। इनके अतिरिक्त पुस्तक में प्रमाण के रूप में बहुत से सूत्र, वाक्य आदि दिए गए हैं जिनमें प्रायः के पते दे दिए हैं। किन्तु अनुलब्ध होने से सबके नहीं दे पाए हैं। उनका अन्वेषण भी समय की अपेक्षा रखता है। अतः उपलब्ध हो जाने पर उनके पते यथावसर ही संग्रहीत हो पाएँगे। इस धृष्टता के क्षमाप्रार्थी रहूँगा।

तीसरी कक्षा का नाम ज्ञानखण्ड है। इसमें विवेक-वैराग्य व सिद्धान्त से सम्बन्धित बातें होती थीं, जो कि योगाभ्यासी के लिए अत्यन्त आवश्यक हैं। इसमें योगदर्शन के अनित्याशुचि ...सूत्र के आधार पर विद्या-अविद्या

का विस्तृत वर्णन किया गया है। साथ ही स्वामी जी ने अपने वैराग्य के प्रमुख उपाय प्रलयावस्था का विशेष वर्णन किया है। साधक की मानसिक तथा व्यावहारिक अवस्था कैसी होनी चाहिए आदि विषयों को विशेष रूप से स्पष्ट किया गया है।

इस शिविर में अहमदाबाद विश्वविद्यालय के अन्तरिक्ष विज्ञान विभाग के विभागाध्यक्ष पद से सेवानिवृत्त वैज्ञानिक डॉ. सत्यदेव जी वर्मा भी श्रोता के रूप में पूरे समय तक भाग लेते रहे। अहमदाबाद आने से पूर्व वर्मा जी मुम्बई में डॉ. भाभा के साथ भी काम कर चुके हैं तथा अमेरिका के अन्तरिक्ष केन्द्र नासा में अनुसन्धान कार्य करते रहे है। वैदिक दर्शनों में उनकी गहरी रुचि है तथा स्वामी जी के प्रति उनमें अत्यधिक श्रद्धा है। इस कक्षा में प्राय: इनको समय दिया जाता था और वे ईश्वर को जानने में विज्ञान कैसे उपकारी है, इस विषय में व्याख्यान किया करते थे। उनकी भाषा में अंग्रेजी की बहुलता थी और मेरी अंग्रेजी की अनभिज्ञता के कारण वह विषय पूरी तरह संगृहीत नहीं हो पाया। हमसे जिस रूप में ग्रहण हो पाया, उस रूप में हमने प्रस्तुत कर दिया है। पुनरपि इस पुस्तक में वर्मा जी के व्याख्यानों से सम्बन्धित जो भी बातें हैं, उनके विषय में वे या अन्य विज्ञानविद् ही प्रमाण होंगे। मै उनका दायित्व लेने में सर्वथा असमर्थ हूँ। हमने केवल उपलक्षणमात्र यहाँ दे दिया है। अत: किसी को कोई आपत्ति या सन्देह हो अथवा विशेष जानकारी की अपेक्षा हो तो कृपया वे उन महानुभावों से सम्पर्क करें।

चौथी कक्षा का नाम आत्मनिरीक्षण है। इस कक्षा में साधक की दिनभर की गतिविधियों को पूछने के उपरान्त जो भी प्रसंगानुकूल बातें होती थीं, उन्हें स्वामी जी बता दिया करते थे। साधक द्वारा बताई गई दैनिक बातों का संग्रह इसमें नहीं किया गया है क्योंकि वे उनकी व्यक्तिगत दिनचर्या से सम्बद्ध थीं तथा अन्यों के लिए कोई आवश्यक नहीं है। जो कोई प्रासंगिक लगी, उसका संकलन कर दिया है।

इन चारों कक्षाओं का आरम्भ मन्त्रोच्चारण के साथ होता था। जिसमें यज्ञीयोपदेश में जप करवाए जाने के कारण मन्त्र बदलते रहते थे। शेष क्रियात्मक योगाभ्यास में गायत्री मन्त्र, ज्ञानखण्ड में गायत्री मन्त्र और सह नाववतु तथा आत्मनिरीक्षण में विश्वानि देव से ईश्वर की स्तुति-प्रार्थना-उपासना की जाती थी। समानता के कारण आरम्भ में हमने ये मन्त्र दे दिए हैं किन्तु आगे नहीं दिए हैं। आगे पाठक कृपया अध्याहार कर लेंगे।

इस पुस्तक में अन्य बहुत से प्रसंग ऐसे है, जो पुन:पुन: आए है। उनके विषय में किसी- किसी पाठक को ऐसा लग सकता है कि इतनी बड़ी पुस्तक है, परन्तु पुनरुक्तियों से भरी पड़ी है तो उनकी बात मेरे लिए सहन करने योग्य है। यद्यपि मैंने उन्हें इसलिए नहीं हटाया कि उनके बिना प्रवाह टूटता है। दूसरा कारण यह है कि उनकी आवृत्ति साधक के लिए अत्यावश्यक है क्योंकि उससे कई नवीन बातें स्पष्ट रूप से समझ में आती है। वैसे भी शास्त्र के द्वारा 'आवृत्तिरसकृदुपदेशात्' का विधान किया ही गया है।

इनके अतिरिक्त इस पुस्तक में ऐसे अनेक ऐसे स्थल या प्रसंग हैं जिनकी पूरी स्पष्टता अभी मुझे भी नहीं है। पुनरपि पूज्य स्वामी जी के द्वारा उनका उपदेश हुआ है। अत: संग्रह की दृष्टि से उनका संकलन अनिवार्य था। रही बात स्पष्ट करने की, तो वह कभी हो जाएगी। क्योंकि सत्य तो शाश्वत् होता है, वह कभी न कभी किसी के द्वारा तो प्रकट होगा ही। जैसा कि इन नौ वर्षों के अन्तराल में अब इतना अन्तर तो दिखाई देता कि शिविर काल में जो विषय सर्वथा अनवगम्य थे आज ज्ञात हो गए, बहुत से अस्पष्ट स्पष्ट हो गए। कतिपय मान्यताओं में भी भेद दिखाई दे रहा है। अत: उन कुछ प्रसंगों को आगम मानकर ही मै भी चल रहा हूँ। कुछ विचाराधीन है, जो आज नहीं तो कल स्पष्ट हो जाएँगे। मै समझता हूँ पाठकों के समक्ष जब ऐसी स्थिति आए तो स्पष्टता के लिए धैर्य पूर्वक प्रतीक्षा करेंगे।

पुस्तक में प्रमाण के रूप में बहुत से मन्त्र, सूत्र, वाक्य आदि दिए गए है जिनमें प्राय: के पते दे दिए है। किन्तु अनुलब्ध होने से सबके नहीं दे पाए है। उनका अन्वेषण भी समय की अपेक्षा रखता है। अत: उपलब्ध हो जाने पर उनके पते यथावसर ही संगृहीत हो पाएँगे। इस न्यूनता के लिए क्षमाप्रार्थी रहूँगा।

प्रकाशन में विलम्ब का मुख्य कारण तो कलेवर की बृहत्ता ही रही। उसके साथ दो-तीन बार स्वयं तथा अन्यों के द्वारा पाण्डुलिपि का निर्माण करना-कराना पड़ा। उसी कारण से लेख-संशोधन में समय का अतिक्रमण

हुआ। पूरा एक वर्ष तो मीमांसा अध्ययन के कारण कार्य स्थगित रहा। पुनरपि ईशकृपा से तीन भागों में यह संस्करण प्रकाशित होने जा रहा है।

अब मै उस परम कृपालु, अपार दयासिन्धु परमात्मा का कोटिशः धन्यवाद करता हूँ जिनके कृपाकटाक्ष से पठन-पाठन, चिन्तन-मनन, योगाभ्यास आदि करते हुए तथा छिट-पुट बाधाओं को पार करते हुए इस सत्कार्य में लगा रहा।

इसके अन्तर पूज्य गुरुवर स्वामी सत्यपति जी महाराज, जिनके मुखारवृन्द से यह वाणी प्रकट हुई और मैने उसे एक पुस्तक का रूप दिया। अब मै इसे पूज्य स्वामी जी महाराज को ही समर्पित कर रहा हूँ तथा उनके प्रति अत्यन्त कृतज्ञ हूँ। मुझे इस बात सेअत्यन्त हर्ष है कि जिन्होंने अपने सान्निध्य के साथ-साथ यह पावनी विद्या प्रदान की। इस शिविर से विशेषकर मै अपनी कायापलट का साक्षी हूँ। अतः मुझे पूर्ण विश्वास है कि इस ग्रन्थ के माध्यम से अन्यों का भी अति उपकार होगा, जिसे कृतार्थ होने वाले ही जान सकेंगे।

इसके पश्चात् दर्शन योग महाविद्यालय के तत्कालीन आचार्य, देश-विदेश में आर्य जगत् में लब्ध-प्रतिष्ठ श्री आचार्य ज्ञानेश्वर जी का धन्यवाद करता हूँ, जिनकी उदारता व अथक पुरुषार्थ से वानप्रस्थ साधक आश्रम, आर्यवन, रोजड़ में सुव्यवस्थित व निर्बाध रूप में विद्यालय की ओर से यह शिविर सम्पन्न हो सका। साथ ही दर्शन योग महाविद्यालय के वर्त्तमान सर्वेसर्वा व निदेशक स्वामी विवेकानन्द जी परिव्राजक का धन्यवाद करता हूँ जिनकी छत्रछाया में विद्यालय की ओर से यह प्रकाशन सम्भव हो पाया।

इस पुस्तक के तृतीय भाग में वाक्यों की संरचना व अस्पष्ट स्थलों के परिष्कार में आचार्य सत्यजित् जी का पर्याप्त सहयोग मिला। उनके बिना यह कार्य अधूरा था। अतः मै उनका हार्दिक धन्यवाद करता हूँ।

कई कारणों से तृतीय भाग का सम्पादन तो पहले हो गया किन्तु प्रथम भाग तथा द्वितीय भाग का सम्पादन पश्चात् हो पाया और इसमें वर्षों का अन्तराल रहा। इन दोनों भागों की पाण्डुलिपियाँ भी तीसरी बार करानी पड़ी, जिससे यह कार्य बहुत श्रमसाध्य हो गया। परन्तु इसके लिए आर्थिक सहयोग के साथ-साथ अपने व्यक्तियों को देकर डॉ. राधावल्लभ जी चौधरी, जबलपुर ने इसे सरलता से सम्पन्न करवा दिया। इसके लिए मै उनका बहुत ही कृतज्ञ हूँ।

इन दोनों भागों में यदि प्रिय उमाशंकर जी का सहयोग नहीं मिला होता तो यह कार्य सम्भवतः निरस्त हो गया होता, नहीं तो कम से कम और तीन-चार वर्ष आगे चला जाता। उन्होंने अति प्रतिकूल परिस्थिति में रहते हुए, अपने स्वास्थ्य की चिन्ता न करके, दिनरात एक करके, आरम्भ से अन्त तक स्वामी जी के प्रवचनों को सुन-सुनकर, प्रायः अक्षरशः वाक्य-पदों का समायोजन किया। तब जाकर यह कार्य सम्भव हो पाया। अतः मै उमाशंकर जी के प्रति कृतज्ञता प्रकट करता हूँ तथा ईश्वर से उनके चिरायुष्य व कल्याण की कामना करता हूँ।

इनके उपरान्त मै अपने विद्यालय के व्यवस्थापक श्री दिनेश कुमार जी का अत्यन्त आभारी हूँ जिन्होंने मुझे विद्यालय की सारी व्यवस्थाओं से निश्चिन्त रखा। इनके साथ ब्र. प्रियेश जी जिनके अथक प्रयास से यह प्रकाशन सम्भव हो पाया का भी अतिशय धन्यवाद करता हूँ। संशोधन कार्य में विशेष सहयोगी ब्र. चन्द्रगुप्त जी के मंगल भविष्य की कामना करता हूँ।

तन-मन-धन से विशेष सहयोग देने वाले अन्यान्य महामना, जिनमें से कुछ नहीं रहे तथा शेष सकुशल है। परन्तु उन्होंने अपने सहयोग के प्रकाशन का प्रतिषेध किया है। पुनरपि मै कुछ सांकेतिक धृष्टता के साथ उनका भूरिशः धन्यवाद करता हूँ। अब विराम॥

विद्वद्-विधेय

सुमेरु प्रसाद दर्शनाचार्य,

आचार्य, दर्शन योग महाविद्यालय, आर्यवन,

विषय सूची बृहती ब्रह्ममेधा

प्रवचन सं.	कक्षा	विषय	तिथि	दिनांक	पृष्ठ संख्या
००१.	शिविर गतिविधि	जीवन लक्ष्यबोध	आषाढ़ शु.१०	०९/०७/०३	०१
००२.	शिविर गतिविधि	लक्ष्य-प्रधानता	आषाढ़ शु.१०	०९/०७/०३	०७
००३.	शिविर गतिविधि	यम-नियम	आषाढ़ शु.१०	०९/०७/०३	१९
००४.	यज्ञीयोपदेश	निर्णय परीक्षण	आषाढ़ शु.११	१०/०७/०३	२२
००५.	क्रिया. योग	निर्णय परीक्षण	आषाढ़ शु.११	१०/०७/०३	२९
००६.	यज्ञीयोपदेश	मंगलाचरण	आषाढ़ शु.१२	११/०७/०३	४३
००७.	क्रिया. योग	निर्विषयता	आषाढ़ शु.१२	११/०७/०३	४७
००८.	ज्ञानखण्ड	ज्ञान	आषाढ़ शु.१२	११/०७/०३	५१
००९.	आत्मनिरीक्षण	परिभाषा व स्वरूप	आषाढ़ शु.१२	११/०७/०३	६०
०१०.	यज्ञीयोपदेश	कर्म	आषाढ़ शु.१४	१२/०७/०३	६३
०११.	क्रिया. योग	योग्य आत्मादि-निर्माण	आषाढ़ शु.१४	१२/०७/०३	६९
०१२.	ज्ञानखण्ड	विद्याग्रहणपद्धति	आषाढ़ शु.१४	१२/०७/०३	७७
०१३.	आत्मनिरीक्षण	अनुशासन	आषाढ़ शु.१४	१२/०७/०३	८३
०१४.	यज्ञीयोपदेश	विधिपूर्वानुष्ठान	आषाढ़ पूर्णिमा	१३/०७/०३	९०
०१५.	क्रिया. योग	उपायसंचय	आषाढ़ पूर्णिमा	१३/०७/०३	९५
०१६.	ज्ञानखण्ड	मृत्युनिश्चय	आषाढ़ पूर्णिमा	१३/०७/०३	९९
०१७.	आत्मनिरीक्षण	मनोनिग्रह	आषाढ़ पूर्णिमा	१३/०७/०३	११०
०१८.	यज्ञीयोपदेश	व्याप्य-व्यापक सम्बन्ध	आषाढ़ कृ.१	१४/०७/०३	११५
०१९.	क्रिया. योग	वृत्तिनिरोध	आषाढ़ कृ.१	१४/०७/०३	१२२
०२०.	ज्ञानखण्ड	उत्पत्ति-विनाश	आषाढ़ कृ.१	१४/०७/०३	१३५
०२१.	आत्मनिरीक्षण	दिनचर्या	आषाढ़ कृ.१	१४/०७/०३	१४५
०२२.	यज्ञीयोपदेश	प्रयोग	आषाढ़ कृ.२	१५/०७/०३	१५१
०२३.	क्रिया. योग	मनोनियन्त्रण	आषाढ़ कृ.२	१५/०७/०३	१५७
०२४.	ज्ञानखण्ड	विनाश प्रक्रिया	आषाढ़ कृ.२	१५/०७/०३	१६६
०२५.	आत्मनिरीक्षण	रसना-अविरति	आषाढ़ कृ.२	१५/०७/०३	१७३
०२६.	यज्ञीयोपदेश	साध्य-साधन-साधक	आषाढ़ कृ.३	१६/०७/०३	१७९
०२७.	क्रिया. योग	पुरुषार्थ,स्वानुभव	आषाढ़ कृ.३	१६/०७/०३	१८६
०२८.	ज्ञानखण्ड	नाशवान् प्रेक्षण	आषाढ़ कृ.३	१६/०७/०३	१९०
०२९.	आत्मनिरीक्षण	दण्ड	आषाढ़ कृ.३	१६/०७/०३	१९८

प्रवचन सं.	कक्षा	विषय	तिथि	दिनांक	पृष्ठ संख्या
०३०.	यज्ञीयोपदेश	पुरुषार्थ प्रयोग	आषाढ़ कृ.४	१७/०७/०३	२०२
०३१.	क्रिया. योग	साधन-संग्रह	आषाढ़ कृ.४	१७/०७/०३	२०६
०३२.	ज्ञानखण्ड	नश्वरता	आषाढ़ कृ.४	१७/०७/०३	२१२
०३३.	आत्मनिरीक्षण	अभ्यास	आषाढ़ कृ.४	१७/०७/०३	२१९
०३४.	यज्ञीयोपदेश	विधि	आषाढ़ कृ.५	१८/०७/०३	२२३
०३५.	क्रिया. योग	प्रयोग	आषाढ़ कृ.५	१८/०७/०३	२२८
०३६.	ज्ञानखण्ड	शरीरनाश विधि	आषाढ़ कृ.५	१८/०७/०३	२३४
०३७.	आत्मनिरीक्षण	शरीरविषयक प्रयोग	आषाढ़ कृ.५	१८/०७/०३	२३९
०३८.	यज्ञीयोपदेश	उपासना विधि	आषाढ़ कृ.६	१९/०७/०३	२४३
०३९.	क्रिया. योग	आत्मविषयकप्रयोग	आषाढ़ कृ.६	१९/०७/०३	२४६
०४०.	ज्ञानखण्ड	आसन, प्रलय	आषाढ़ कृ.६	१९/०७/०३	२५५
०४१.	आत्मनिरीक्षण	ज्ञानसंशोधन, स्वानुभव	आषाढ़ कृ.६	१९/०७/०३	२६२
०४२.	यज्ञीयोपदेश	ईश्वरीय-सम्बन्ध	आषाढ़ कृ.७	२०/०७/०३	२६७
०४३.	आत्मनिरीक्षण	प्रश्नोत्तर	आषाढ़ कृ.७	२०/०७/०३	२७०
०४४.	यज्ञीयोपदेश	ईश्वर सव्यवहार	आषाढ़ कृ.८	२१/०७/०३	२७५
०४५.	क्रिया. योग	विक्षेपनिवारण	आषाढ़ कृ.८	२१/०७/०३	२७७
०४६.	ज्ञानखण्ड	प्रलयोपलब्धि	आषाढ़ कृ.८	२१/०७/०३	२८६
०४७.	आत्मनिरीक्षण	चित्तस्थिति	आषाढ़ कृ.८	२१/०७/०३	२९५
०४८.	यज्ञीयोपदेश	उपासना विधि	आषाढ़ कृ.९	२२/०७/०३	३०१
०४९.	क्रिया. योग	पापविनाश	आषाढ़ कृ.९	२२/०७/०३	३०५
०५०.	ज्ञानखण्ड	प्रलयावस्था	आषाढ़ कृ.९	२२/०७/०३	३११
०५१.	आत्मनिरीक्षण	बाधा	आषाढ़ कृ.९	२२/०७/०३	३१८
०५२.	यज्ञीयोपदेश	विधिसज्जा	आषाढ़ कृ.१०	२३/०७/०३	३२४
०५३.	क्रिया. योग	सन्ध्याप्रशिक्षण	आषाढ़ कृ.१०	२३/०७/०३	३२७
०५४.	ज्ञानखण्ड	ईश्वरानुभूति	आषाढ़ कृ.१०	२३/०७/०३	३३८
०५५.	आत्मनिरीक्षण	वचनबाधा	आषाढ़ कृ.१०	२३/०७/०३	३४९
०५६.	यज्ञीयोपदेश	उपासनासज्जा	आषाढ़ कृ.११	२४/०७/०३	३५५
०५७.	क्रिया. योग	पुरुषार्थ	आषाढ़ कृ.११	२४/०७/०३	३६१
०५८.	ज्ञानखण्ड	संस्कार	आषाढ़ कृ.११	२४/०७/०३	३७२
०५९.	आत्मनिरीक्षण	विषयनिर्धारण	आषाढ़ कृ.११	२४/०७/०३	३७९

प्रवचन सं.	कक्षा	विषय	तिथि	दिनांक	पृष्ठ संख्या
०६०.	यज्ञीयोपदेश	उपासनानिवार्यता	आषाढ़ कृ.११	२५/०७/०३	३८७
०६१.	क्रिया. योग	सन्ध्या	आषाढ़ कृ.११	२५/०७/०३	३९४
०६२.	ज्ञानखण्ड	जप	आषाढ़ कृ.११	२५/०७/०३	४०४
०६३.	आत्मनिरीक्षण	चित्तस्थिति	आषाढ़ कृ.११	२५/०७/०३	४१३
०६४.	यज्ञीयोपदेश	ईश्वर ही सर्वस्व	आषाढ़ कृ.१२	२६/०७/०३	४१९
०६५.	क्रिया. योग.	व्याप्यव्यापकभाव	आषाढ़ कृ.१२	२६/०७/०३	४२४
०६६.	ज्ञानखण्ड	विनाश-प्रयास	आषाढ़ कृ.१२	२६/०७/०३	४३२
०६७.	आत्मनिरीक्षण	वृत्तिनिरीक्षण	आषाढ़ कृ.१२	२६/०७/०३	४४०
०६८.	यज्ञीयोपदेश	त्रिकर्मविधि	आषाढ़ कृ.१३	२७/०७/०३	४४६
०६९.	आत्मनिरीक्षण	स्वामित्व	आषाढ़ कृ.१३	२७/०७/०३	४५३
०७०.	यज्ञीयोपदेश	जीवात्मा	आषाढ़ कृ.१४	२८/०७/०३	४६०
०७१.	क्रिया. योग	स्तुति-प्रार्थनोपासना	आषाढ़ कृ.१४	२८/०७/०३	४६५
०७२.	ज्ञानखण्ड	निर्विषयता	आषाढ़ कृ.१४	२८/०७/०३	४७४
०७३.	आत्मनिरीक्षण	सम्मानभय	आषाढ़ कृ.१४	२८/०७/०३	४८२
०७४.	यज्ञीयोपदेश	योगाभ्यास	आषाढ़ अमावश्या	२९/०७/०३	४८७
०७५.	क्रिया. योग	सिद्धान्तनिर्णय	आषाढ़ अमावश्या	२९/०७/०३	४९२
०७६.	ज्ञानखण्ड	प्रलय-प्रयोग	आषाढ़ अमावश्या	२९/०७/०३	५००
०७७.	आत्मनिरीक्षण	बाहर-भीतर एकता	आषाढ़ अमावश्या	२९/०७/०३	५०५
०७८.	यज्ञीयोपदेश	उपासनाविधि	श्रावण शु.१	३०/०७/०३	५११
०७९.	क्रिया. योग	उपाय	श्रावण शु.१	३०/०७/०३	५१५
०८०.	ज्ञानखण्ड	सज्जा	श्रावण शु.१	३०/०७/०३	५२३
०८१.	आत्मनिरीक्षण	मनोविकारोद्भव	श्रावण शु.१	३०/०७/०३	५३२
०८२.	यज्ञीयोपदेश	अनुष्ठानदोष	श्रावण शु.२	३१/०७/०३	५४१
०८३.	क्रिया. योग	सहभाव	श्रावण शु.२	३१/०७/०३	५४६
०८४.	ज्ञानखण्ड	शिविरोपलब्धि	श्रावण शु.२	३१/०७/०३	५५४
०८५.	आत्मनिरीक्षण	स्थिति-प्रेक्षण	श्रावण शु.२	३१/०७/०३	५६०

॥ ओ३म् ॥

ओ३म्

बृहती ब्रह्ममेधा

१ शिविर-गतिविधि

निज जीवन का लक्ष्य-बोध : आषाढ़ शुक्ल १०/२०६०-०९/०७/२००३

ऋचो अक्षरे परमे व्योमन् यस्मिन्देवा अधि विश्वे निषेदुः।
यस्तन्न वेद किमृचा करिष्यति य इत् तद्विदुस्त इमे समासते ॥ ऋ.१/१६४/३९।

अभी हम जो आप लोगों को ऊँचे स्तर पर योग विद्या को सिखाने हेतु तीन माह का एक कार्यक्रम करने जा रहे हैं, उसमें प्रशिक्षण की क्या गतिविधि होगी तथा उनसे सम्बन्धित और क्या-क्या आवश्यक बातें होती हैं, वे सब आपको अब भूमिका के रूप में बताई जाएँगी। अतः उन सब बातों को ध्यान से श्रवण करना, समझना, पुनः अच्छे प्रकार से लेखबद्ध कर लेना तथा व्यवहार में ले आना, ये सारे कार्य आपको करने पड़ेंगे।

यद्यपि ऋषिकृत ग्रंथो में अनेकत्र संकेत आया है कि मानव-जीवन का लक्ष्य मोक्ष-प्राप्त करना है पुनरपि 'करना और करवाना' इस सिद्धान्त पर हम विशेष बल देते हैं क्योंकि कभी किसी को यह संशय हो सकता है कि केवल स्वयं ही ईश्वर-प्राप्ति कर लेवें, अन्यों को न करवाएँ तो कोई दोष नहीं। वस्तुतः केवल स्वयं ही ईश्वर-प्राप्ति कर लेना, अन्यों को न करवाना उचित नहीं है। अतः स्वयं की तरह अन्यों की मुक्ति के लिए भी प्रयास करना, यही उचित है। इसकी पुष्टि महर्षि दयानन्द सरस्वती जी द्वारा कथित आर्यसमाज के छठे तथा नौवें नियम से भी होती है जिनमें उन्होंने कहा कि 'संसार का उपकार करना इस समाज का मुख्य उद्देश्य है' तथा 'अपनी उन्नति में ही सन्तुष्ट न रहना चाहिए किन्तु सबकी उन्नति में अपनी उन्नति समझनी चाहिए'।

वैसे तो ये सारी बातें प्रमाणों से सिद्ध हैं पर कभी-कभी गंभीरता से विचार न करने के कारण व्यक्ति ऐसा समझता है कि के वल मैं ही मोक्ष प्राप्त कर लूँ (अन्यों का हो या न हो, मेरा कोई कर्त्तव्य नहीं)। जबकि समाज, राष्ट्र या विश्व की स्थिति को बिना देखे-सम्भाले या अपनी बराबरी में रखे बिना, परिणाम यही होगा कि वह व्यक्ति स्वयं भी ईश्वर की प्राप्ति नहीं कर पाएगा।

आपको आ गई बात समझ में या पुनः पुनः पूछना-बताना पड़ेगा? कई ऐसे विद्यार्थी होते हैं जिनको एक बार बता देने पर वे समझ लेते हैं किन्तु किसी को तीन बार बताओ तब समझ में आएगा। आप कौन से हैं? पहले का एक उदाहरण देता हूँ - जब तपोवन में लगभग एक मास का हमारा प्रथम शिविर लगा था। उसमें योग दर्शन का पाठ चलता था तो एक शिविरार्थी सतीश जी (अमेरिका वाले) थे, जो बताते थे कि मैं पहले पाठ को दोहराता हूँ, पुनः विचारता हूँ। उसके पश्चात् जो समझ में नहीं आता, उसको पूछ लेता हूँ। तो ऐसे को बार-बार बताने की आवश्यकता नहीं है किन्तु आप यदि ऐसा नहीं करते हैं तब आपको भी समझ में नहीं आएगा या बार-बार पूछना पड़ेगा। तो पहले बता दो आप किस स्तर वाले हैं? उत्तर क्यों नहीं दे रहे हैं?

ब्रह्मचारी – अब तक जो बातें बताई हैं वे समझ में आई हैं। आगे जो आप बताएँगे तो हो सकता है, मुझे पूछना पड़े।

स्वामी जी – जैसे कि अभी जो बात कही इसमें कितनी सूक्ष्मता है, कितना रहस्य है, इसकी कल्पना करना अत्यन्त बुद्धिमान् का कार्य है। अर्थात् हम जिस स्तर पर अपनी मुक्ति चाहते हैं, तो क्या उसी स्तर पर तन-मन-धन से दूसरे को करवाना चाहते हैं या नहीं? अथवा मान लो कि आप जब अच्छा-अच्छा फल, घी-दूध, मिठाई, हलवा खा रहे हैं और आपके आस-पास अन्य ब्रह्मचारी बैठे हैं, तब आप सोचते हैं कि जैसे मुझे मिल रहे हैं ऐसे ही इनको भी मिलने चाहिएँ? या केवल अपना विशेष ध्यान रहता है, अन्यों का नहीं। चलो! आपका परीक्षण करते हैं, क्या सोचते हो आप बताओ? अच्छा! इसका ध्यान रखना कि यहाँ सिद्धान्त नहीं रखना है अपितु जो अन्दर है वही बताना है।

ब्रह्मचारी १ – समानता रखते हैं।

स्वामी जी – कहीं इस डर से तो नहीं कह रहे कि समाज कहेगा यह तो बहुत दुष्ट ब्रह्मचारी है, केवल अपना ही सोचता है। ऐसा तो नहीं है? इस मार्ग पर यह नहीं चलता। यहाँ तो जो अन्दर है वही बाहर बताना है।

ब्रह्मचारी २ – जितना अच्छा फल हमको मिलता है उतना अन्यों को भी मिले, यही भावना रखते हैं।

स्वामी जी – हाँ! ऐसी तुलना होती रहनी चाहिए और सतत यह भावना बनी रहे। इस बात पर ध्यान देना कि जो व्यक्ति बाहर-भीतर मन-वाणी-शरीर से एक होकर रहता है (व्यवहार करता है) वही इस विद्या को सीखता है। उसे तो यह विद्या पूरी समझ में आएगी, शेष को सामान्यरूप में आएगी, विशेष नहीं आएगी। महर्षि दयानन्द जी सरस्वती ने कहा है कि सत्य को ग्रहण करने और असत्य को छोड़ने में सर्वदा उद्यत रहना चाहिए। यह परिभाषा एड़ी से चोटी तक लागू होनी चाहिए। इससे एक और संकेत आता है कि सत्य को जानना और जनाना व्यक्ति का लक्ष्य होना चाहिए। किन्तु समाज में इस नियम का पालन बहुत कम होता है। प्रायः प्रवचन-उपदेश या आवृत्ति तक सीमित बना रहता है, व्यवहार में नहीं उतारा जाता। स्वयं को कसौटी पर कसकर देखो तो पता चलेगा कि बड़ी से बड़ी या छोटी से छोटी बुराई भी सामने आते ही हमारी क्या स्थिति होती है? जैसे कि आपने चोरी की है और हजारों लोगों के सामने स्वीकार करना कि हाँ! मैंने चोरी की है, आगे नहीं करूँगा; ऐसा कर सकते हैं? तो ऐसा करने वाला हजारों, लाखों में कोई एक मिलता है। आप बताइए, आपका क्या अनुभव है? या अभी भी आप बताना नहीं चाहते। आपको लग रहा होगा कि हाँ कहेंगे तो कठिनाई, न कहेंगे तो कठिनाई है। यह भी एक भय है, यदि ऐसा है तो यहाँ नहीं चलेगा। यहाँ तो जैसा है वैसा बताकर चलना पड़ेगा।

योग सीखने वालों में इसके कुछ अंश मिलते हैं जैसा कि हमने देखा। कई लोग कुछ बातें तो सब के बीच में बता देते हैं परन्तु आगे कहते हैं और नहीं बताऊँगा। तो यह व्यक्ति भी यहाँ नहीं चल सकता है। अब आप बताइये कि सबके बीच में अपना सब कुछ बताने के लिए तैयार हैं या नहीं?

साधक २, ३ – तैयार हैं।

स्वामी जी – आपका पता नहीं पर कुछ बातें ऐसी होती हैं जिनके लिए व्यक्ति कहता है कि इसको तो मैं केवल आचार्य जी या स्वामी जी के सामने बता सकता हूँ, सबके सामने नहीं। तो यह

भी संकुचित विचारधारा है और योग के ऊँचे क्षेत्र में साधक को प्रवेश नहीं करने देती। आजकल सर्वत्र यही तो हो रहा है। कल्पना करते हैं कि एक व्यक्ति ने पहले कभी झूठ बोला, चोरी की, सारी आचारहीनताएँ कीं और अब वह चाहता है कि मैं सत्य की खोज करूँ, तीन काल में जो सत्य है उसको जानूँ अथवा योगी बनूँ, तो इस व्यक्ति के लिए कोई ऐसी सीमा नहीं होगी जहाँ वह कह सके कि मैं यहाँ सत्य नहीं बोलूँगा। यह पृथक् बात है कि लम्बे काल के पश्चात् जब व्यक्ति पुराना हो जाता है (पीछे सब कुछ बता चुका होता है) तब वह इतना विचार करने लगता है कि मेरे सत्य बोलने से सामने वाला लाभ नहीं उठा पाएगा। अतः मौन रहना ही उचित है, तो वह ऐसा कर लेता है। किन्तु ऐसा कहीं-कहीं होता है, सर्वत्र नहीं। पुनरपि नया व्यक्ति ऐसा नहीं कर सकता। वह यदि ऐसा करने लगे तो उलझ जाएगा और कालान्तर में सर्वत्र संकुचित व्यवहार करने लगेगा। इसलिए जो नया-नया वैरागी होता है अथवा सत्य की खोज कर रहा होता है वह यह मर्यादा नहीं बना पाता है कि मैं यहाँ इतना बोलूँगा, इतना बचाऊँगा। आपको अभिप्राय समझ में आ रहा है या पुनः दोहराऊँ? क्या समझ में आया? कौन बताएगा?

ब्रह्मचारी १ – नये व्यक्ति के लिए यह नियम है कि वह कहीं कुछ न छिपाये।

स्वामी जी – योगाभ्यास के क्षेत्र में जब व्यक्ति नया-नया अग्रसर होता है या वैराग्य को प्राप्त करता है अथवा त्रिकाल सत्य की खोज आरम्भ करता है तब वह ऐसी कोई मर्यादा नहीं बनाता कि मैं यहाँ तो इतना सत्य बोलूँगा, इतना बचा लूँगा। यदि वह ऐसा करता है तो पुनः सांसारिक स्तर पर उतर जाएगा। (हाँ जी! सत्यनारायण जी! नींद तो नहीं आ रही? थकान तो नहीं हो गई? हम आपको सावधान करते रहेंगे तो अधिक ध्यान से सुनेंगे।)

तो आपने न्याय दर्शन का उन्नीसवां सूत्र पढ़ा है, उसके भाष्य का ध्यान होगा। वहाँ भाष्यकार ने एक बात कही कि यदि मुक्ति में भी राग उत्पन्न हो जाए तो वह भी प्राप्त नहीं होगी। अर्थात् साधक यदि रागात्मक रुचि रखते हुए ऐसा सोचने लगे कि मुक्ति पाकर मैं आनन्दित हो जाऊँगा जैसे लौकिक लोग हलुए-खीर से हो जाते हैं तो वह मुक्ति को प्राप्त नहीं हो पाएगा। क्योंकि लौकिक सुख जैसा राग यदि मुक्ति में होगा तब जो कोई थोड़ा-सा भी विरोध करेगा उसी से द्वेष हो जाएगा और तब सफल नहीं होगा।

यही नियम मानापमान पक्ष में भी लागू होगा वहाँ भी यदि अपमान का भय रहा तो मुक्ति नहीं होगी। मान लो साधक सोचने लगा कि यदि मैंने जनता को ज्यों का त्यों सत्य सुना दिया तब तो मेरा अपमान हो जाएगा तथा उसका कुप्रभाव पड़ेगा। लोग कहेंगे - अच्छा! यह चोरी-डकैती करने वाला व्यक्ति योग की बातें करता है! ऐसे वह डर जाता है। आई बात समझ में? सांसारिक बुद्धि को हटाकर सोचो तो ये बातें शीघ्र समझ में आ जाएँगी।

पुनः दोहराता हूँ ध्यान से सुनेंगे – इसको पिछले प्रसंग से जोड़ते हैं अर्थात् साधक पहले कभी झूठ बोलता था, चोरी करता था, आचारहीनता करता था और अब चाहता है कि मैं मुक्ति के मार्ग पर चलूँ अथवा योगी बनूँ और कोई उससे सीधा प्रश्न करे या कोई प्रसंग आ जाए कि आप पहले ऐसा करते थे, तो सत्य स्वीकार करना होगा। उसे ज्यों का त्यों बताते हुए चलना होगा। कोई डर नहीं, कोई राग नहीं, कोई द्वेष नहीं होना चाहिए। मुक्तिप्राप्ति हेतु यथार्थ को स्वीकार करना आवश्यक है। इतना ही नहीं, मुक्ति में भी राग नहीं होना चाहिए क्योंकि राग द्वेष को उत्पन्न करता है। जो कोई मुक्ति का विरोध करेगा, उसी से द्वेष हो जाएगा। इस स्थिति में आप गति नहीं कर पाएँगे। अतः कहा – मुझे सुख मिले या न मिले, मेरा दुःख हटना चाहिए। **अथ त्रिविध**

दुःखात्यन्तनिवृत्तिरत्यन्तपुरुषार्थः । सांख्य. १/१/१ । अब आपको समझ में आ गया होगा । क्यों जी ?

साधक ३ – हाँ जी! आ रहा है ।

आचार्य नैष्ठिक जी – इसका यह अभिप्राय निकला कि मुक्ति में रागयुक्त प्रयत्न करते समय जो कोई उसका बाधक होगा, उसी से द्वेष हो जाएगा ।

स्वामी जी – हाँ । इसलिए जब दुःख से छूटने पर बल लगेगा तब मुक्ति में राग नहीं होगा । यदि राग नहीं होगा तो द्वेष भी नहीं होगा । ऐसा किये बिना व्यक्ति वैराग्य की स्थिति में नहीं जा पाता । आपने वहाँ जो पढ़ा है **दृष्टानुश्रविकविषयवितृष्णस्य वशीकारसंज्ञा वैराग्यम्** यो.द. १/१५ । और भाष्य में कहा **हेयोपादेयशून्या** । अर्थात् राग की स्थिति में कहता है – यह बड़ा अच्छा है और द्वेष की स्थिति में कहता है – यह बड़ा गन्दा है । तो ये राग-द्वेष दोनों ही नहीं होने चाहिएँ तब तो वैराग्य आएगा, अन्यथा नहीं आएगा और वैराग्य नहीं आएगा तो समाधि नहीं लगेगी ।

माताओं को भी तो बात समझ में आ रही होगी ! कुछ लाभ तो हो रहा होगा, क्योंकि सुनने से संस्कार बनते हैं । सारी बात एक बार में समझ में नहीं आएगी किन्तु एक आएगी, दो आएँगी, तीन आएँगी । इस प्रकार लाभ अवश्य होगा ।

तो एक बात से दूसरी बात कैसे जुड़ी ? हमने एक बात उठाई थी कि जो व्यक्ति सर्वथा, सर्वदा बाहर-भीतर से एक होकर चलेगा और सोचेगा कि मुझे सत्यासत्य को जानना है, मेरा जीवन इसी के लिए है तब वही व्यक्ति उच्च स्तर का योगी बन पाएगा, दूसरा नहीं बन पाएगा । सिद्धान्त समझ में आ गया ? शंका हो तो पूछो ? अन्यथा पुनः सुनो ! जो व्यक्ति सर्वस्व की आहुति इसलिए दे रहा है कि 'तीनों कालों में सत्य क्या है' इसको मुझे जानना है, वही व्यक्ति उच्च स्तर का योगी बन पाएगा । उदाहरण के लिए कोई कहे कि यह मेरा शरीर है । माता जी कहती हैं – मैं इसकी माँ हूँ, यह मेरा बेटा है । तो यह जो 'मैं और मेरा' का स्वरूप लोक में देखा जाता है, इसमें सत्य क्या है ? एक ओर तो कह रहे हैं 'मैं और मेरा' और दूसरी ओर देखा जाता है कि न तो कोई कुछ लेकर आया, न लेकर जाता है । अब वह खोज करता है कि यहाँ वास्तविकता क्या है ? यह मेरा शरीर है या नहीं ? तो अन्त में वह इस निणर्य पर पहुँचता है कि वास्तव में यह शरीर मेरा नहीं है । मैंने यों ही अपने को इसका स्वामी मान रखा है क्योंकि न तो मैंने यह शरीर बनाया है, न तो यह मेरे कारण जीवित है । न माता-पिता ने बनाया है, न उनके कारण रक्षित है । जो माता-पिता या हमारे द्वारा रक्षित है, वह भी ईश्वर के द्वारा दी हुई शक्ति के कारण सुरक्षित है ।

अब बोलो समझ में आया या नहीं आया ? आप भी इसका परीक्षण कर लो ! कल्पना करो, सारी जीवात्माओं को शरीर से पृथक् कर इकट्ठा कर लो और कहो कि सब मिलकर नीम का एक पत्ता बना दो । तो क्या बना देंगे ?

साधक २ – नहीं ।

स्वामी जी – तो कौन स्वामी हुआ इसका ? यहाँ एक शंका हो सकती है कि यह शरीर हमारे पास है, हम इसको चलाते हैं तो स्वामी क्यों नहीं ? तो इसका समाधान है कि हम गौण स्वामी हैं । ईश्वर ने दिया है, इसकी रक्षा करते हैं, इससे धर्म-अर्थ-काम व मुक्ति की सिद्धि करेंगे । समझ में आया या नहीं ? नहीं आया हो तो पुनः पूछो ?

अब साधक और आगे क्या करता है ? जैसे इस एक विषय में सत्यासत्य का निर्णय किया, वैसे प्रत्येक विषय में सत्यासत्य का निर्णय करता है और जो-जो सत्य सिद्ध होता जाता है, उसको ग्रहण करता जाता है तथा जो-जो असत्य सिद्ध होता जाता है, उस-उस को छोड़ता जाता है । यद्यपि

कुछ असत्य तत्काल छूट जाते हैं, कुछ महीनों में और कुछ ऐसे दोष होते हैं जिनको छोड़ने में वर्षों तक प्रयत्न करना पड़ता है। पचास वर्ष तक भी जूझता रहता है किन्तु पीछे हटने की बात नहीं आती। जो ऐसा करता है, उसको इस कार्य से रोकने वाला कोई नहीं होता। संसार का क्या हो रहा है, कौन क्या कह रहा है? इस ओर कोई ध्यान नहीं देता, केवल अपना कार्य करता चला जाता है। हाँ! और याद रखो कि ऐसा व्यक्ति ही आत्मा-परमात्मा को जान सकता है, समाधि की स्थिति को प्राप्त कर पाता है, दूसरा नहीं।

अब आपका दृष्टान्त दूँ। आपने दर्शन पढ़े, वेद पढ़े, बहुत कुछ पढ़ा और उनमें एक सत्य यह निकला कि भाई! समाज का हम जो भी काम करेंगे जैसे कि गुरुकुल चलायेंगे, प्रवचन-उपदेश करेंगे, वे सब साधन होंगे। उन्हें निष्काम भाव से करेंगे, परन्तु ईश्वर-प्राप्ति करना-करवाना ही हमारा एक मात्र लक्ष्य होगा। किन्तु यदि आपने यह स्वीकार नहीं किया, ईश्वर-प्राप्ति करना-करवाना प्रमुख लक्ष्य नहीं बना तो सत्यग्राही नहीं हुए। आंशिक सत्यग्राही हैं आप, पूर्ण सत्यग्राही नहीं। जो पूर्ण सत्यग्राही होगा उसका लक्ष्य ईश्वर-प्राप्ति करना-करवाना ही होगा और ऐसा नहीं करते तो ईश्वर की प्राप्ति नहीं कर सकते तथा दोषी माने जायेंगे। समझ में नहीं आया हो तो पूछ लो? शिक्षा की बातें हैं ये, केवल भाषण की नहीं। इस विषय में केन-उपनिषद् का प्रमाण ले सकते हैं, वहाँ यह प्रसंग आया है –

इह चेदवेदीदथ सत्यमस्ति न चेदिहावेदीन्महति विनष्टिः। केन. २/५।

हे व्यक्ति! यदि इसी जीवन में ईश्वर को प्राप्त कर लिया तो तू सफल है, उचित है। यदि ईश्वर को इस जीवन में नहीं जाना तो तेरा विनाश हो गया। यह शब्दावली क्या बताती है? कोई ऐसा जीवन नहीं, कोई ऐसा आश्रम नहीं है जिसमें ईश्वर को छोड़ दिया जाए अथवा ईश्वर को गौण मानकर चला जाए। गौण मानना भी हानिकारक है, छोड़ने की तो बात ही क्या।

आचार्य नैष्ठिक जी – यदि ऐसा है, ब्रह्मचर्य आश्रम में ईश्वर-प्राप्ति गौण नहीं होती तो वहाँ ईश्वर-प्राप्ति को छोड़कर गृहस्थ आश्रम में जाने का विधान क्यों है?

स्वामी जी – (इससे ब्रह्मचर्य आश्रम में ईश्वर-प्राप्ति गौण है, यह बात सिद्ध नहीं होती।) इसमें कारण है व्यक्ति की अक्षमता। व्यक्ति अपनी दुर्बलता के कारण ऊपर नहीं जा सकता (ईश्वर-प्राप्ति नहीं कर सकता) है, तो गृहस्थ आश्रम में चला जाता है। किन्तु वहाँ जाकर चुप नहीं रहेगा, वहाँ विशेष बल लगाएगा। गृहस्थ आश्रम में भी लक्ष्य ईश्वर-प्राप्ति ही मानेगा, अन्य नहीं। यहाँ आकर भी उसका लक्ष्य यही बना रहेगा, यद्यपि यहाँ भी कितना सफल होगा यह पृथक् बात है, किन्तु लक्ष्य वही रहेगा, अन्य कार्य साधन होंगे। यदि यह आदर्श नहीं रखा तो व्यक्ति दोषी ही माना जाएगा और यदि लक्ष्य बना हुआ है तथा अपनी शक्ति के अनुसार कर रहा है तो यह भी ठीक है। इस प्रकार जूझते हुए वैराग्य नहीं प्राप्त हुआ तो आगे वानप्रस्थ की तैयारी करेगा। वहाँ जाकर पूरा करेगा।

तो समय होने को है। एक अन्य बात का ध्यान रहे – यह सारा प्रयास इन विषयों को समझने (हमारा जो प्रशिक्षण आगे होना है उस) के लिए है। पहले व्यक्ति को समझ में आना चाहिए, पुनः श्रवण-मनन-निदिध्यासन-साक्षात्कार की बात आती है। अन्यथा पहले ही समझ में नहीं आए या शंकाओं का ढेर लगा हो, तो अगला प्रयास या उस कार्य में उत्साह नहीं होता है।

दूसरी बात व्यवस्था से सम्बन्धित – इसको करते हुए आज भी एक समय हम अपने दैनिक कार्य करेंगे तथा अन्य भी बहुत से व्यवस्था के कार्य करने होंगे। अर्थात् पूर्णरूप से पहले के कार्यों

को करते हुए भूमिका के रूप में समझने-समझाने का कार्य करते रहेंगे। आगे समय नियत कर सकते हैं जैसे कि साढ़े १० से ११ बजे तक आधा घंटा रख सकते हैं। अभी से पूरा-पूरा समय नहीं चला सकेंगे। आगे चलकर भूमिकादि के रूप में सोच-समझकर, प्रबन्ध-व्यवस्था देखकर विधि-विधान से प्रशिक्षण आरम्भ करेंगे।

ब्रह्मचारी ४ – इसको मध्याह्नोत्तर कर लें तो कैसा रहेगा? प्रातःकाल विद्यालय में पठन- पाठन का कार्य चलता है।

स्वामी जी – मध्याह्नोत्तर रखो तो एक घण्टा या पौन घण्टा रख सकते हैं।

आचार्य नैष्ठिक जी – जी हाँ! मध्याह्न के पीछे एक घण्टा या पौन घण्टा रख सकते हैं।

ब्रह्मचारी ४ – जैसा आप बताएँ।

स्वामी जी – तो ठीक है मध्याह्नोत्तर तीन से चार बजे तक इसको कर लेते हैं। विद्यालय में पढ़ने वाले ब्रह्मचारी ध्यान दें। आप के लिए भी यह विद्या सीखने योग्य है, जैसी कि अन्यों के लिए है। ऐसा मत समझना कि विद्यालय में पढ़ रहे हैं तो सब हो गया है।

अब ऋषियों का संकेत - गुरुकुल में जब ब्रह्मचारी प्रवेश करता है तब कहा जाता है कि आचार्य उसको तीन दिन गर्भ में रखता है। तो इस वाक्य का क्या अभिप्राय है? इसका अभिप्राय है कि पठन-पाठन की तीन रीतियाँ हैं। इनमें से एक है - आचार्य द्वारा ब्रह्मचारी को अपने पास सुरक्षित रखना और पठन-पाठन कराना। दूसरी रीति - पूरा व्यवहार सिखाना और तीसरी रीति है - योगाभ्यास-उपासना सिखाना। ये तीनों गुण यहाँ लागू होते हैं। इन तीन में सब कुछ आ जाता है या इसी को इस रूप में कह दो कि ज्ञान-कर्म और उपासना को सीखने का काल ही तीन रात्रियाँ हैं। वस्तुतः यह प्रतिपादन की एक रीति है कि पठन-पाठन, योगाभ्यास ऐसे करना है। आचार्य, माता-पिता, छोटे-बड़े के साथ व्यवहार ऐसे करना है। यदि आपको ये तीनों रीतियाँ नहीं आती हैं तो आप प्रगतिशील नहीं हो सकते। अब विराम ॥

२ शिविर-गतिविधि

लक्ष्य-प्रधानता : आषाढ़ शु. १०/२०६०-०९/०७/२००३

अब हम गायत्री मन्त्र का पाठ करेंगे –

ओं भूर्भुवः स्वः। तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि। धियो यो नः प्रचोदयात्॥ यजु. ३६/३

।

आप में से कौन-कौन ऐसे ब्रह्मचारी हैं जिनको गायत्री मन्त्र के एक-एक शब्द का अर्थ स्मरण है और वे कौन-कौन हैं जिनको स्मरण नहीं है? ..... नहीं सुनाई दिया?

साधक ४ – जी, स्मरण है।

स्वामी जी – स्मरण है तो हाथ खड़े करो। वही तो है जो संस्कारविधि में है?

साधक ४ – जी हाँ!

स्वामी जी – अच्छा! अब दूसरा प्रश्न। आपमें से ऐसे कितने ब्रह्मचारी हैं जिनका लक्ष्य ईश्वर-प्राप्ति करना व करवाना मुख्य हो चुका है? नहीं समझ में आया हो तो कहो हमें समझ नहीं आया! और एक बात – किसी प्रश्न का उत्तर देते समय यह ध्यान रखो कि वह उत्तर पहले से परीक्षित हो।

साधक २ – स्थूल दृष्टि से देखें तो निर्णय ले लिया है पर सूक्ष्म दृष्टि से देखने पर लगता है कि निर्णय नहीं हुआ है।

स्वामी जी – अच्छा! इनका तो स्थूल दृष्टि से निर्णय हो गया है पर सूक्ष्म दृष्टि से नहीं हुआ है। अब आप अपना-अपना बतायेंगे कि निर्णय हो गया है या नहीं हुआ है अथवा हो गया तो सूक्ष्म दृष्टि से हुआ है? हाँ जी! पहले आप बतायेंगे।

साधक ३ – जितना मेरा ज्ञान काम करता है उस आधार से निर्णय हो चुका है। यह पृथक् बात है कि पुरुषार्थ में कमी है, परन्तु मेरा पूर्ण निर्णय तो हो चुका है।

स्वामी जी – अच्छा! निर्णय के भी दो भिन्न-भिन्न स्तर हैं। एक तो मन्थन करके परीक्षा-पूर्वक सिद्धान्त रूप में निर्णय होना और उसके लिए कुछ प्रयास भी करना और दूसरा व्यावहारिक रूप में ईश्वर-प्राप्ति ही उसके जीवन का लक्ष्य बन चुका है और इसके समान कोई कार्य इस संसार में नहीं है। अब समझ में आया!

साधक ८ – समझ में आ गया है।

स्वामी जी – यदि समझ में आ गया है तो अब इसका ठीक-ठीक उत्तर दो। लक्ष्य का सिद्धान्त रूप में निर्णय हो जाना, यह तो ठीक है, किन्तु यह भी एक मोटा रूप है। इसका सूक्ष्म रूप है मन-वचन-कर्म से कार्य आरम्भ कर दिया, पूरा बल लगा दिया तथा इसके अतिरिक्त संसार में उसका अन्य कोई प्रयोजन नहीं रहा। अब देखो कितना समझ में आया?

साधक १ – स्वामी जी! सिद्धान्त रूप में हमें अनुभव में आता है लेकिन मन-वचन-कर्म से सदैव वही बुद्धि बनी रहे; ऐसा नहीं रहता है।

स्वामी जी – इनका अभिप्राय दिखता है कि कभी-कभी तो स्तर बनता है, पुनः हट जाता है।

सूचना :- यदि आप बृहती ब्रह्ममेधा का सम्पूर्ण शेष भाग PDF File के रूप में प्राप्त करना चाहते है तो आप अपना नाम, आयु, शिक्षा, व्यवसाय, पता, ई-मेल, दूरभाष आदि जानकारी के साथ हमारे पते पर अथवा ई-मेल से संपर्क करें।

दर्शन योग महाविद्यालय

आर्यवन, रोजड़, पत्रा. सागपुर, ता. तलोद, जि. साबरकांठा (गुजरात) ३८३३०७

दूरभाष : (०२७७०) २८७४१८, २८७५१८ • चलभाष : ९४०९४ १५०११, ९४०९४ १५०१७

Email : darshanyog@gmail.com • **Website :** www.darshanyog.org
Facebook : darshanyog • **Youtube :** darshanyog2009
Orkut : darshanyog • **Skype :** darshanyog